हाशिए का समाज : अवधारणा एवं स्वरूप

वन्दना पाण्डेय,

शोधार्थी–हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग,
डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय,लखनऊ (उ.प्र.)

शोध सारांश

भारतीय समाज में 'हाशिये का समाज' स्वतन्त्रता के बाद से एक महत्वपूर्ण अंग हो गया है। हाशिये का यह समाज केन्द्र में जाने के लिए लगातार संघर्ष कर रहा है। वर्तमान में हाशिये का समाज दो प्रकार तरह से हाशिये पर अपना जीवन यापन कर रहा है। इसमें एक वर्ग जैसे स्त्री समाज, कृषक, मजदूर, दलित, दिव्यांग एवं अल्पसंख्यक ऐसा है जो केन्द्र की मुख्यधारा से जुडा हुआ है। वहीं दूसरा वर्ग ऐसा है जो केन्द्र से बहुत दूर है जैसे आदिवासी एवं जनजातियाँ हैं। इनमें भी दिव्यांग, दलित और दलित स्त्रियों का जीवन और भी कठिन एवं दयनीय है। साहित्य में हाशिये के समाज के लिए जो कार्य कबीर रैदास, रामानन्द एवं हीरा डोम ने किया, उसी कड़ी में स्वामी अछूतानन्द मील का पत्थर साबित हुए हैं। इन्हें वर्तमान दलित साहित्य का पिता माना जाता है।

Key Words- *हाशिए का समाज, गणतन्त्र ,जनतन्त्र, समाजशास्त्रीय अवधारणा,स्वरूप एवं परम्परा।*

समाज पारस्परिक संबंधों को कहते हैं जिसका अप्रत्यक्ष रूप होता है। लोगों के बीच पारस्परिक संबंध प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में होता है। समाज में रहने वाले व्यक्तियों की सोच, समझ, चरित्र, विचार आदि में अन्तर होता है। यदि सभी लोगों में समानता होती तो ये भेड़ों के जैसे व्यवहार करते, परन्तु ऐसा नहीं होने के कारण आपसी सहयोग की भावना इनमें पायी जाती है। किसी कार्य को पूरा करने में सहयोग ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

समाज केवल व्यक्तियों का ही नहीं होता अपितु जीव–जन्तु, पशु–पक्षियों का भी अपना समाज होता है। पशु–पक्षियों का जो समाज होता है इनमें पारस्परिक संबंध दीर्घकालिक नहीं होता है। इनमें कोई सभ्यता नहीं होती। मानव एक प्रबुद्ध प्राणी है अतः पशु–पक्षियों के समाज में भी मानव–समाज की सहभागिता होती है। पशु समाज में मानव की तरह कोई सामाजिक व्यवस्था नहीं होती है। मनुष्य प्रत्येक समय सीखता रहता है, मानव सीखकर अपने आदर्श व्यवहार को प्रदर्शित करता है। मानव नैतिक व्यवहार करता है जबकि पशुओं में इसका अभाव होता है। किन्तु मानव ऊँच–नीच, लिंग आदि का भेद–भाव होता है। पशु–पक्षियों में नैतिक रूप में कोई लैंगिक भेद नहीं होता है।

व्यक्तियों के किसी भी संस्था, धर्म, वेश–भूषा, लिंग, बोली के आधार पर उस विशेष समूह को भी समाज लोग कहने लगते हैं। जैसे स्त्री समाज, दलित समाज, किन्नर समाज, हिन्दू समाज, अल्पसंख्यक समाज आदि। जबकि समाज का कोई निश्चित रूप नहीं होता है। समाज का अप्रत्यक्ष रूप है। जहाँ जीवन है वहीं समाज है।

समाज का निर्माण मानव समूह द्वारा होता है जहाँ कई लोग एक साथ रहते है, एक साथ

सभी क्रिया कलापों में सहभागी बनते हैं। समाज का अपना एक नियम होता है जिसके तहत हम अपने संबन्धों का निर्वाह करते हैं। समाज के एक ही सदस्य की अनेक भूमिका होती है कभी वह भाई, पिता, पति आदि अलग अलग रूपों समय–समय पर वह संबन्धों का निर्वाह करता है इसी प्रकार से समाज का ताना बाना तैयार होता है। मैकाइवर एवं पेज के शब्दों में –

''समाज सामाजिक संबंधों का जाल है।''

समाज का कोई रूप नहीं होता है। परन्तु हम मानव के समूह को भी समाज कहते हैं, उदाहरण स्वरूप आर्य समाज। तब यह समाज नहीं 'एक समाज' का प्रतिनिधित्व करता है। यह उस समाज का नाम है। अतः यह समाज का निश्चित रूप है।

ग्रीन के शब्दों में–

> ''मानव समाज में समूह तथा व्यक्ति एक ही सिक्के के दो पहलू हैं व्यक्ति के बिना समाज एवं समाज के बिना व्यक्ति की कल्पना नहीं की जा सकती है।''

मैकाइवर का कहना है कि ''समाज रीतियों, कार्यविधियों, अधिकार व पारस्परिक सहायता, अनेक समूहों तथा उनके उप–विभागों, मानव व्यवहार के नियन्त्रण और स्वतन्त्रताओं की व्यवस्था है।''

इस परिभाषा में मैकाइवर ने यह बताने का प्रयास किया है कि समाज, सामाजिक संबंधों और इन संबंधों को प्रभावित करने वाले कारकों की एक कठिन तथा परिवर्तनीय व्यवस्था है।

समाज में सामाजिक व्यवस्था को संचालित करने के लिए एक व्यवस्था बनीय गयी जिसे कई वर्गों में विभाजित किया गया किन्तु दुःख की बात यह है कि यह व्यवस्था रूढ़ि रूप में अपना अलग ही एक नये समाज की संरचना कर लिया जिसका मूर्त रूप हमारे वर्तमान समाज की व्यवस्था को विगाड़ दिया है। जैसे, लिंग, भेद, धर्म भेद, आदि के आधार पर समाज का आदर्श रूप अब नही रह गया है।

समाज के स्वरूप को समझने के बाद हमारी नजर समाज के उस वर्ग पर गयी जो आज वर्तमान परिवेश में हाशिए पर है। हाशिए से मेरा मतबल ऐसे लोगों से है जो समाज की मुख्य धारा से दूर हो गए हैं। उन्हें लिंग, धर्म, व्यसाय, आर्थिक, शारीरिक आधार पर कई वर्गो में विभाजित कर दिया गया है।

हाशिए का समाज, समाज की मुख्यधारा का एक महत्वपूर्ण अंग है जो तत्कालीन परिस्थितियों के कारण हाशिए पे चला गया है। **'हाशिया'** शब्द आज हमारे वर्तमान परिवेश में सामने आया, तब हमें अपने बचपन का दिन याद आया। जब हम स्कूल के शुरूआती दिनों में प्राथमिक पाठशाला में पढ़ने जाते थे तो एक लकड़ी की पट्टी पर हम लिखते थे। उस पट्टी पर मास्टर साहब हशिया खिंचवाते थे और कहते थे कि हाशिए के बाँयी तरफ कुछ नहीं लिखना है। हाशिये के दाँयी तरफ से लिखना हम शुरू करते थे अर्थात् बाँयी तरफ का हिस्सा भी उसी पट्टी का हिस्सा है जैसे दाँयी तरफ का है किन्तु बाँयी तरफ वाला उपेक्षित है इसी प्रकार समाज में किसी कारण से समाज में जो लोग अलग या पीछे रह गये उन्हें हाशिए पर भेज दिया गया।

'हाशिए का समाज' का स्वरूप भी एक समाजशास्त्रीय अवधारणा है। समाजशास्त्र के विद्वानों ने 'हाशिए का समाज' की अवधारणाओं में जिन समस्याओं और प्रवृत्तियों का उल्लेख किया है वह महत्त्वपूर्ण है। किसी भी समाज के उन समूहों के सम्मलित समाज को हाशिये का समाज कहा गया है जो सामाजिक आर्थिक, भौगोलिक, राजनैतिक, शारीरिक, धार्मिक आदि कारणों से पीछे रह गये हैं और नये परिवेश में अपने आपको स्थापित नहीं कर पाते इसी कारण यह समाज अपने आपको हाशिये पर महसूस करता है।

'हाशिये का समाज' स्वतन्त्रता के बाद से भारतीय समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है। ये लोग केन्द्र में जाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। भारतीय समाज में दो प्रकार के लोग हाशिये पर अपना जीवन यापन कर रहे हैं। एक वर्ग ऐसा है जो केन्द्र के इर्द–गिर्द रह रहा है। जैसे स्त्री समाज, कृषक, मजदूर, दलित, दिव्यांग अल्पसंख्यक आदि दुसरा वर्ग ऐसा है जो केन्द्र से बहुत दूर है जैसे आदिवासी, जनजातियाँ हैं। इनमें भी दिव्यांग, दलित और दलित स्त्रीयों का जीवन और भी कठिन एवं दैयनीय है। जन्म से ही मानव का समाज में स्थान निर्धारण उसके कुल, वर्ग, लिंग के आधार पर कर दिया जाता है। इस कारण से भारतीय लोगों का ''सामाजिक उत्पीड़न इतना अमानवीय हो गया था कि निम्नतम स्तर के कुछ लोगों को अछूत तथा निकृष्ट मान लिया गया था। उन पर दृष्टिपात होने भर से लोग अपवित्र हो जाते थे और जो अछूत जाने–अनजाने किसी ब्राह्मण को दिखलाई पड़ जाता था तो उसे बड़ी कड़ी सजा मिलती थी''[1] दक्षिण भारत में तियान (Tiyan) और पुलायन (Pulayan) को स्पष्टतः निर्दश था कि वे नम्बुदरी (Nambudri) ब्राह्मणों से छत्तीस और छियानबे कदम की दूरी बनाकर चलें।[2] यहाँ तक कि अस्पृश्य जाति के लोगों को अपना घर, सवर्णों के घर से दूर और गाँव से एकदम बाहर बनाने का निर्देशा था तथा मन्दिर और गाँव की एक निश्चित सीमा के अन्दर उन्हें प्रवेश करने का अधिकार नहीं था।''[3] इस प्रकार गाँव की पूरी जाति व्यवस्था में हरिजन और दलित लोग हाशिये पर जीवन बिताने के लिए बाध्य थे यहाँ तक कि उन्हें सवर्णों के कुओं और तालाबों से पानी लेने का भी अधिकार नहीं था।[4] इस तरह से देखा जाय तो ये लोग गाँव की इस व्यवस्था में हाशिये का जीवन जीने के बाध्य थे।

हरिराममणि के अनुसार – ''किसी भी राष्ट्र समाज के उन घटकों के मानव समुदाय के सम्मलित समाज को हाशिये का समाज कहा गया है, जो समाज के अगुवा तबके की तुलना में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक स्तर पर किन्हीं कारणों से पीछे रह गया है।''[5]

चौथीराम यादव ने एक पत्रिका को दिये गये साक्षात्कार में कहते हैं कि ''हाशिये के समाज से प्रायः तात्पर्य दलित समाज है, पिछड़ा समाज है, आदिवासी समाज है, किसान, मजदूर यही सब तो है हाशिये का समाज। मुझे लगता है कि जिन्हें हाशिये का समाज कहा जाता है, वे बहुसंख्यक समाज है और आबादी का हिसाब से बहुसंख्यक समाज होने के नाते मुध्यधारा का समाज है। लेकिन तमाम आर्थिक संसाधानों और शिक्षा से वंचित करके उन्हें हाशिये पर ढ़केल दिया गया है और जो हाशिये के लोग है, कम आबादी वाले लोग है, वे वर्चस्व बनाये हुए हैं और वहीं मुख्यधारा के केन्द्र में है। जिसे आज हाशिये का समाज कहा जाता है, उसे हाशिये का समाज नहीं कहा जाना चाहिए। यह मुध्य धारा का समाज है क्योंकि बहुसंख्यक समाज है और उसकी आबादी भी बहुत ज्यादा है, देश की बहुसंख्यक आबदी को हाशिये का समाज नहीं कहा जा सकता। लेकिन स्थिति यह है कि बहुत दिनों से जो शिक्षा है, आर्थिक संसाधन है, उससे वंचित करके उन्हें एक प्रकार सक हाशिये पर ढकेल दिया गया है। उस पर पढ़े–लिखे सर्चस्वशाली लोग आधिपत्य जमा चुके हैं, तो हाशिये के समाज को नए ढंग से सोचने की जरूरत है।''[6]

राबर्ट ई0 पार्क ने कहा है कि ''किसी एक स्थिति मे रहने वाले लोगों और प्रजातियों के बीच जो सांस्कृतिक भिन्नताएँ हैं, उनका विश्लेषण करने की प्रवृत्ति सभ्य समाज के विद्यार्थियों में रहती है।''[7] राबर्ट ई0 पार्क ने 'सीमांत आदमी' (Marginal Man) के नाम से पहली बार प्रस्तुत किया।

भारतीय समाज प्राचीन काल से वर्तमान काल तक का दृष्टिकोण एक समान रहा है। प्राचीन काल में भारतीय समाज वर्ग भेद पर आधारित था। वर्ण भेद का उल्लेख ऋग्वेद में हुआ –

''ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहूराजन्यः कृतः।
उरूतदस्य यद्वैश्यः पदभ्यां शूद्रो अजायत''[8]

मनुस्मृति के अनुसार ''ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के अतिरिक्त कोई पाँचवा वर्ण नही है।''[9] ऋग्वेद में एक ब्राह्मण ऋषि के कथनानुसार, ''मै कवि हूँ, पिता वैद्य थे, माँ चक्की पीसने वाली थी''।[10] इससे यह पता चलता व्यवसाय की स्वतंत्रता थी। ''विवाह जैसे सामाजिक संस्कारों में छुट के प्रमाण मिलते हैं, क्षत्रिय राजा स्यात् की पुत्री का विवाह श्यवन ऋषि ब्राह्मण से हुआ था।''[11]

तत्कालीन समाज में देंखे तो भारतीय समाज की पुरानी संरचना आज भी जीवन्त है और शूद्र वर्ण आज भी नरकीय जीवन जीने को विवश है। जबकि श्रीमद्भागवत गीता वर्ण भेद को कम के आधार पर माना गया है ''चातुर्वर्ण्यं भयासृष्टं गुणकर्म विभगशः।''[12] अर्थात् वर्ण भेद मुख्य रूप से कर्म के आधार पर निर्धारित हुआ, किन्तु कालान्तर में यह रूढ़ हो गया।

सामाजिक संरचना में व्यक्ति समाज का एक महत्वपूर्ण अंग है। जैसे हाशिये के समाज का एक समाजशास्त्रीय स्वरूप है उसी प्रकार हाशिये के लोगों का भी अपना एक स्वरूप एवं अपनी पहचान है। राबर्ट ई0 पार्क ने 'सीमांत आदमी' में लिखा है, ''विभिन्न प्रजातियों के बीच आपसी संबंध से जो नई प्रजाति अथवा पीढ़ी विकसित होती है, वह संक्रमण के दौर से गुजरती है। तथा धीरे–धीरे वह अपने समाज में हाशिये पर चली जाती है।''[13] इसी कारण उन्होंने कहा है कि ''सीमांत आदमी मिश्रित खून का आदमी होता है।''[14] इसका कारण यह है कि वह एक समय में दो संसार निवास करता है जिसमें वह स्वयं को अपरचित पाता है जिसके कारण वह परेशान रहता है। राबर्ट ई0 पार्क ने कहा है कि ''समय के साथ दो प्रजातियों के अंतः प्रजनन के फलस्वरूप उसके मानसिक और शारीरिक आकृति में बदलाव आता है यही कारण है कि बहुत सारी प्रजातियाँ अपनी शारीरिक आकृति के कारण ही हाशिये पर चली जाती है, जैसे दक्षिण अफ्रिका के अश्वेत समाज के साथ हुआ। इस अवधारणा के अनुसार प्रजातियों के अर्न्तसंबंध से उत्पन्न 'वर्णसंस्कार' चरित्र अपने आपको समाज में हाशिये पर खड़ा अनुभव करता है। दुसरा तत्व यह है कि हर काल में तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक कारणों से संस्कृति में परिवर्तन आता रहता है जिसके कारण उस विशेष परिवेश और काल में व्यक्ति का चरित्र बदल जाता है। हाशिये के लोगों की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक परिवेश में पहले बढ़ने के कारण धीरे–धीरे उनके व्यक्तित्व में दोहरापन आने लगता है और ड्यू ब्वायज के शब्दों में वह दोहरी चेतना एकदम एकाएक नहीं होती बल्कि दो संस्कृति के मध्य वह ताकतवर या मुख्यधारा अपने आपको व्यवस्थित न कर पाने की स्थिति में स्वयं को हाशिये पर खड़ा महसूस करने लगता है। इस संस्कति अन्तर्द्वन्द्व का मूल कारण यह होता है कि व्यवस्थित करने की कोशिश करता है इसका कारण आर्थिक विषमता होती है। ऐसे में प्रभावशाली समूह का आविष्कार करना ही इस मनुष्य के लिए हाशिये पर खड़ा होना है। अर्थात् स्थान परिवर्तन भी मूल कारणों में एक कारण है जिससे मानव संकट में पड़ जाता है तथा स्वयं को हाशिये पर महसूस करता है।''[15]

''भारतीय समाज की संरचना का विश्लेषण करते हैं तो पता चलता है कि सिद्धान्त है कि सिद्धान्त और व्यवहार दोनों रूपों में यह एक 'बहुसामुदायिक' समाज है।''[16] इसमें अनेक वर्ण, धर्म, पंथ के लोग रहते हैं। इनमें कुछ

रूढ़िवादी समाज की व्यवस्था और अशिक्षित लोग मुख्यधारा के साथ तालमेल नहीं रख पाते और धीरे–धीरे समाज की मुख्यधारा से अलग हो जाते और हाशिये पर चले जाते हैं। दलित, स्त्री, आदिवासी, मुस्लिम, दिव्यांग समाज आदि के लोग वर्तमान समय में भी हाशिये पर है। समाजशास्त्र में ''प्रजाति नृतत्व विज्ञान वेत्ताओं के अध्ययन का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है जिसके अन्तर्गत वे मानव जाति के वैसे समूह या खण्ड का अध्ययन करते हैं जिनकी रंग, रूप आकार आदि की दृष्टि से अपनी एक अलग निजी शारीरिक विशेषताएं होती हैं तथा जो वैवाहिक संबंध के बाद प्रजनन द्वारा नियमित रूप से एक के बाद एक हर पीढ़ी में क्रमशः आ जाती है।''[17] आदिवासियों का सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक शोषण समाज के पूँजीवादी, सामंतवादी, उद्योगपतियों ने किया है हिन्दू समाज के बारे में के0एल0 शर्मा ने कहा है कि ''सैद्धान्तिक दृष्टि से यद्यपि जनजातियाँ हिन्दू सामाजिक संगठनों का अंग नही है परन्तु वे हमेशा वृहद समाज के सम्पर्क में रही हैं। जनजातियों के क्षेत्रों में रहने वाले और आदिवासियों ने इनका आर्थिक और सामाजिक शोषण किया।''[18]

अंग्रेजों के शासन में बिहार (झारखण्ड वर्तमान में) के संथालों की पीड़ा को लेकर महाश्वेता देवी एवं निर्मला घोष ने लिखा है कि ''संथालों ने घने जंगलों को साफ करके जमीन को खेती बाड़ी करने और रहने योग्य बनाया था उन्होंने इसमें फसले पैदा की। व्यापारियों और सूदखारों महाजनों ने उनके भोलेपन, ईमानदारी तथा सीधेपन का बड़ी ही चालाकी से फायदा उठाया और उनके फसलों पर कब्जा करके कुछ नमक, तम्बाकू और शीरा दे दिया। बाद में गरीब संथाल भूखों मरते थे।''[19] वस्तुतः आदिवासी समाज, भारतीय समाज के हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और सिक्ख जैसे विभिन्न संप्रदायों के कभी अंग नही रहे। एक अवधि तक हिन्दू संसर्ग में रहने के कारण उन पर हिन्दू जीवन शैली का असर जरूर पड़ा। बैंगा, भील, गोंड, संथाल, कमोर, भरिया, कोल और बिंझवार जैसे आदिवासी समुदायों ने एक हद तकन केवल हिन्दू धर्म अनुष्ठानों को अपनाया, बल्कि मराठी, बंगला और अन्य भारतीय भाषा के विभिन्न रूपों को भी स्वीकार किया।''[20] आदिवासी समाज अन्य भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के साथ सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाता है। इसका कारण यह है कि आदिवासी समाज की अपनी सभ्यता एवं संस्कृति है। अतः वह समाज की मुख्यधारा की धारा से अलग–थलग रहते हैं।

''हाशिये के समाज की सबसे बड़ी पहचान हमेशा संकट में रहने की स्थिति में होता है। कहा जा सकता है कि यह एक ऐसी स्थिति है, जिसका अनुभव 'हाशिये के लोग' बराबर करते हैं। अपनी मूल संस्कृति और समाज के कट जाने के बाद उन्हें हमेशा इस बात का डर बना रहता है कि पता नहीं उनके ऊपर कब कौन–सा संकट आ जाए। आर्थिक और विपरित भौगोलिक परिवेश के कारण व्यक्ति स्थान परिवर्तन करता है तथा अपने आपको एक नई जगह पर व्यवस्थित करने की कोशिश, करता है, जो एक तरह से अस्थायी होता है।''[21]

भारत एक लोकतन्त्रात्मक देश है। यहाँ देश के राजा का चयन जनता के द्वारा होता है लेकिन गणतन्त्र हो या जनतन्त्र, लाभ तो सामंतवादी, पूँजीवादी, प्रभुतासम्पन्न लोगों का ही होता है। सत्ता लाभ से दूर एक समाज हाशिये पर अपना जीवन व्यतीत कर रहा है। आजादी के पूर्व जो दलित, स्त्री, आदिवासी, मुस्लीम, दिव्यांगों की जो स्थिति थी उसमें थोड़ा बहुत सुधार हुआ है परन्तु पूर्णतया नहीं यह अवश्य कहा जा सकता है कि अंग्रजों के आने से हाशिये के समाज की स्थिति में सुधार अवश्य हुआ। वर्तमान शासन व्यवस्था में इनके लिए अनेक कानूनी अधिकार दिये गये हैं फिर भी यह समाज आज भी गुण धारा से दूर दर–दर भटक रहा है। आज इन्हीं

कानूनी अधिकारों के वजह से अपने देश में से अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ रहे हैं। संविधान ने जो इन्हें समानता, स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार दिया है, उसी की देन है कि आज दलित वर्ग का व्यक्ति देश का राष्ट्रपति है एवं दलित महिलाएँ लोकसभा अध्यक्ष, मुख्यमंत्री आदि पदों पर पहूँची हैं। पिछड़े वर्ग से आने वाले नरेन्द्र मोदी देश के प्रधानमंत्री हैं किन्तु कुछ गिने चुने ही लोग हैं जो समाज की मुख्यधारा के साथ कदम मिलाकर चल रहे हैं अभी देश की एक बड़ी जनसंख्या हाशिये पर है वह अभिशप्त जीवन जीने को विवश है। इसमें दिव्यांग, आदिवासी, अल्पसंख्यक, स्त्री पिछड़ा वर्ग, किन्नर आदि अनेक लोग हैं जो इस समाज के एक अभिन्न अंग हैं किन्तु समाज के केन्द्र में रह रहे लोग उन्हें हाशिये पर जीवन जीने को विवश करते हैं, इसमें सबसे दयनीय स्थिति तो दिव्यांगों की है जो समाज तो समाज तो अपने परिवार में भी हाशिये पर जीवन जीने के लिए विवश हैं उनके माता–पिता, भाई–बहन उनको अपने साथ मुख्यधारा में न रखकर हाशिये पर भेज दिये हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. हंस, 1993 अगस्त, पाण्डेय, डॉ0 मैनेजर ,तितली, क्या अपने 'बज्रसूची' का नाम सुना है? पृष्ठ–19
2. हंस, 1993 अगस्त, पाण्डेय, डॉ0 मैनेजर ,तितली, क्या अपने 'बज्रसूची' का नाम सुना है? पृष्ठ–19
3. देसाई,ए0आर0 भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि ,दिल्ली प्रगति प्रिन्टर्स,दिल्ली,1976, पृष्ठ–196
4. Indian Society: SC. Dubey, National Book Trust, India New DElhi... Second Edition 1992, Page-57
5. सिंह प्रो0 वी0 कृष्ण, भीम डॉ0, आदिवासी विमर्श, पृष्ठ–14
6. अपनी माटी पत्रिका, दलित आदिवासी विशेषांक, अंक–19, सितम्बर–नवम्बर 2015,साक्षात्कार, आलोचक चौधी राम यादव, दिनेश पाल और दीपक कुमार के साथ बातचीत,पृष्ठ–2
7. अपनी माटी पत्रिका, दलित आदिवासी विशेषांक, अंक–19, सितम्बर–नवम्बर 2015,साक्षात्कार, आलोचक चौधी राम यादव, दिनेश पाल और दीपक कुमार के साथ बातचीत,पृष्ठ–2
8. श्रीवास्तव एवं चौबे,मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति : उ0प्र0 हिन्दी संस्थान लखनऊ, द्वितीय संस्करण,1990,पृष्ठ–2
9. श्रीवास्तव एवं चौबे,मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति : उ0प्र0 हिन्दी संस्थान लखनऊ, द्वितीय संस्करण,1990,पृष्ठ–6
10. श्रीवास्तव एवं चौबे,मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति : उ0प्र0 हिन्दी संस्थान लखनऊ, द्वितीय संस्करण,1990,पृष्ठ–2
11. श्रीवास्तव एवं चौबे,मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति : उ0प्र0 हिन्दी संस्थान लखनऊ, द्वितीय संस्करण,1990, पृष्ठ–2
12. गीता, 4/13 ,गीता प्रेस,गोरखपुर,2001,उ0प्र0
13. पार्क राबर्ट ई0,माव का स्थान परिवर्तन और सीमांत आदमी–पृष्ठ–8/3
14. पार्क राबर्ट ई0,माव का स्थान परिवर्तन और सीमांत आदमी–पृष्ठ–8/3

15. कुमार दीपक,चौबे देवेन्द्र,सं0,हाशिये का वृतान्त–आधार प्रकाशन, पंचकुला ,हरियाणा,2018,पृष्ठ–13
16. शर्मा,के0एल0,भारतीय समाज–एन0सी0ई0आर0टी0, नई दिल्ली2010,पृष्ठ–11
17. दूबे श्यामचरण ,मानव और संस्कृति–राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली,2016, पृष्ठ– 505
18. शर्मा0के0एल0, भारतीय समाज – एन0 सी0 ई0 आर0 टी0, नई दिल्ली 2010, पृष्ठ–83
19. 19.भारत के बंधुआ मजदूर– महाश्वेता देवी, निर्मल घोष राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली,2010,पृष्ठ–31
20. 20.शर्मा0के0एल0.भारतीय समाज–एन0सी0ई0आर0टी0, नई दिल्ली2010,पृष्ठ–83
21. 21. कुमार दीपक सं0 चौबे देवेन्द्र हाशिये का वृत्तांत– आधार प्रकाशन, पंचकुला ,हरियाणा,2018,पृष्ठ–59